आत्मदेव-वन्दना

(कविवर पण्डितश्री राजमलजी पवैया, भोपाल)

आत्मदेव ही देव हैं महादेव बलवान।
निज अन्तर में जो बसा, शाश्वत सुख की खान॥

मैं आत्मदेव चैतन्य पुञ्ज, ध्रुव दर्शनभूत अतीन्द्रिय हूँ।
मैं तो ज्ञानात्मक निरालम्ब, परमात्म स्वरूप अतीन्द्रिय हूँ॥

मैं तो नारक अथवा मनुष्य, तिर्यञ्च देव पर्याय नहीं।
मैं उनका करता कारयिता कर्ता का अनुमन्ता न कहीं॥
मैं नहीं मार्गणा गुणस्थान अथवा मैं जीवस्थान नहीं।
मैं उनका कर्ता कारियता, कर्ता का अनुमन्ता न कहीं॥
मैं एक अपूर्व महा-पदार्थ, मैं पर द्रव्यों में अक्रिय हूँ।
मैं आत्मदेव चैतन्य पुञ्ज, ध्रुव दर्शनभूत अतीन्द्रिय हूँ॥1॥

मैं बाल नहीं मैं तरुण नहीं, मैं रोगी अथवा वृद्ध नहीं।
मैं उनका कर्ता कारयिता, कर्ता का अनुमन्ता न कहीं॥
मैं राग नहीं मैं द्वेष नहीं, मैं मोह नहीं मैं क्षोभ नहीं।
मैं उनका कर्ता कारयिता, कर्ता का अनुमन्ता न कहीं॥
मैं सहज शुद्ध चैतन्य विलासी, पर भावों में निष्क्रय हूँ।
मैं आत्मदेव चैतन्य पुञ्ज, ध्रुव दर्शनभूत अतीन्द्रिय हूँ॥2॥

मैं क्रोध नहीं मैं मान नहीं, मैं माया अथवा लोभ नहीं।
मैं उनका कर्ता कारयिता, कर्ता का अनुमन्ता न कहीं॥

कर्तृत्व सकल का है अभाव, शुद्धातम को तो बंध नहीं।
रस गंध स्पर्श रूपादिक से, मेरा कुछ भी सम्बन्ध नहीं॥
मैं प्रकृतिभूत सुख का स्वामी, अपने स्वरूप में सक्रिय हूँ।
मैं आत्मदेव चैतन्य पुञ्ज, ध्रुव दर्शनभूत अतीन्द्रिय हूँ॥3॥

मैं प्रकृति प्रदेश स्थितिबंध, अनुभागबंध के पास नहीं।
औदारिक आहारक तैजस, कार्माण वैक्रियक वास नहीं॥
ये सब पुद्गल द्रव्यात्मक हैं, इनसे तो आत्म प्रकाश नहीं।
ऐसा दृढ़ निश्चय किये बिना, अज्ञान दशा का नाश नहीं॥
मैं ज्ञान सिन्धु परिपूर्ण शुद्ध, निर्वाण सुन्दरी को प्रिय हूँ।
मैं आत्मदेव चैतन्य पुञ्ज, ध्रुव दर्शनभूत अतीन्द्रिय हूँ॥4॥

आत्मदेव का आश्रय ही जग में है सार।
पूर्ण शुद्ध चैतन्य घन, मंगलमय शिवकार॥